**ओ३म**

**‘मनुष्य में संस्कार व गुणों का आधान ही समाज कल्याण है’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 स्वामी वेदानन्द तीर्थ (1892-1956) वेदों के शीर्षस्थ विद्वान थे। उन्होंने जो साहित्य़ सृजित किया, वह मनुष्य की उन्नति के लिए लाभकारी एवं उपादेय है। मनुष्य को शिक्षित, संस्कारित व गुणों से आपूरित करना ही उसको धार्मिक बनाना है। यदि मनुष्य विद्या व ज्ञान से युक्त नहीं होगा तो वह धर्म से विरत व पृथक ही कहा व माना जायेगा। धर्म व मत-मतान्तर पृथक पृथक हैं। धर्म मनुष्य के जीवन में सत्य गुणों अर्थात् सत्य विद्याओं व तदानुरुप आचरण के धारण को कहते है। मत व मतान्तर किसी मनुष्य वा महापुरूष की कुछ धार्मिक व कुछ निजी शिक्षाओं के मानने को कहते हैं जो उनके व उनके दिए हुए नाम पर चलते हैं। **मनुष्य व महापुरूषों की सभी शिक्षायें सत्य हों, यह आवश्यक नहीं है।** महापुरूष भी मनुष्य होने से अल्पज्ञ होते हैं। सब का नैमित्तिक ज्ञान न्यून व अधिक होता है। अतः उनकी शिक्षायें भी अल्पज्ञता के कारण सत्य व असत्य दोनों श्रेणियों की हुआ करती हैं। ईश्वरीय ज्ञान, वर्तमान में चार वेद ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद, ही पूर्ण सत्य ज्ञान होता है। **अतः शिक्षा व विद्या को प्राप्त करते हुए यह ध्यान देना आवश्यकता है कि पढ़ा हुआ ज्ञान व विद्या वेद सम्मत है अथवा नहीं?** वेदसम्मत का ग्रहण व जो वेद सम्मत नहीं है, उसका त्याग करना ही मनुष्य का धर्म है। सत्य ज्ञान, विद्या व शिक्षा को पढ़कर व धारण कर ही मनुष्य धार्मिक बनता है और इसके विपरीत वह धर्म विहीन पशु के समान रहता है। स्वामी जी ने इसका अपनी ज्ञानप्रसूता लेखनी से बहुत ही प्रभावशाली वर्णन किया है जिसे पाठकों के लाभार्थ प्रस्तुत कर रहे हैं।

 **‘‘मनुष्य यतः समाजिक प्राणी है, अतः उसको उत्कृष्ट बनाने के यत्न को समाज-हितकारी कर्तव्य या धर्म कहना न्यायसंगत है।** इसी कारण गृह्ययज्ञ--संस्कार मनुष्य के साथ मनुष्य समाज के भी अत्यन्त उपकारक हैं। समाज मनुष्यों का समुदाय है। यदि किसी मकान में लगा सामान--ईंट, चूना, गारा, सीमेंट, काष्ठ, लोहा, निकृष्ट कोटि के हों तो वह मकान अवश्य निकृष्ट, घटिया होगा। **इसी भांति यदि समाज के घटक अवयव-मनुष्य घटिया होंगे तो समाज भी घटिया ही होगा, बढि़या नहीं हो सकेगा। अतः सिद्ध हुआ कि मनुष्य वा व्यक्ति के संस्कार करना, उसमें उत्कृष्ट गुणों का आधान करना वास्तव में समाज का कल्याण करना है।**

मनुष्य और पशु चेतना के कारण भोजन, मैथुन, भय, निन्द्रा आदि में समान हैं। सत्य बात तो यह है कि इन बातों में मनुष्य पशुओं की समानता नहीं कर सकता। क्या कोई भोजन में हाथी की समता कर सकता है? **मनुष्य में विशिष्टता धर्म के कारण है।** कहा भी है--**धर्मो हि तेषामधिको विशेषो धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः=मनुष्य में धर्म ही पशुओं से अधिक विशेष है। धर्म से हीन मनुष्य श्रृंगपुच्छविहीन पशु है। धर्म का मूल विद्या एवं बुद्धि है। इसी वास्ते किसी ने कहा है--विद्याविहीनः पशुः--विद्याविहीन मनुष्य मनुष्य नहीं, प्रत्युत पशु है।**

**मनुष्य मनुष्य बने, पशु न रहे, इसके लिए, विद्या से उसे अवश्य सुभूषित करना चाहिए।”**

हम आशा करते हैं पाठक स्वामीजी के विचारों से सहमत होंगे व इसे स्वीकार कर वेदाध्ययन में प्रवृत्त होंगे। वेदाध्ययन में प्रवृत्त होने के लिए आरम्भ में सत्यार्थप्रकाश और ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका का अध्ययन लाभकारी होता है। यह दोनों वेदाध्ययन के मार्गदर्शक ग्रन्थ हैं व भूमिका का कार्य करते हैं।

 **-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**